जीवन-मूल्यों की पाठशाला - भारतीय संस्कृति

डॉ. गिरधारी लाल शर्मा
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान
लाडनूं-341306 (राजस्थान)

सारांश- जीवन-मूल्य मूलतः संस्कृति की साधना का प्रतिफल हैं जो राष्ट्र के जीवन्त प्रतिमानों तथा मानवीय मूल्यों का आधार है। भारतीय संस्कृति ने जिन जीवन-मूल्यों को शाश्वत रूप में प्रतिष्ठापित किया है वे आज भी सत्य की कसौटी पर खरे हैं। भारतीय संस्कृति अनेक जीवन-मूल्यों, यथा–सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय, सहिष्णुता व उदारता, राष्ट्रीयता, दान व परोपकार, गृहस्थ भावना, माता-पिता व गुरु सम्मान, पर्यावरण-संरक्षण, सच्चरित्रता, कर्तव्यपरायणता, कर्मप्रधानता, प्रेम व सौहार्द्र आदि की अथाह प्रवाहमान सरिता रही है। आज जबकि विश्व के समक्ष अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक व पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं, समाज में अत्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार, माता-पिता तथा गुरु की अवहेलना, नारी-अपमान, स्वार्थपरकता, हत्या, आत्महत्या, सामूहिक बलात्कार, पर्यावरण विनाश, बढ़ता प्रदूषण, राष्ट्रद्रोह की बढ़ती प्रवृत्ति, बेरोजगारी, कर्तव्यविमुखता, हिंसा, परिग्रह, चोरी आदि की भयावह स्थिति मूल्यहीनता का ही दुष्परिणाम है। हमें इस दिशा में न केवल गंभीर चिंतन करना होगा बल्कि चिंतन को आचरण में लाना होगा। इस हेतु आवश्यक है–भारतीय संस्कृति में निहित मानवीय मूल्यों को स्वयं के आचरण में लाना तथा उनका भरपूर प्रचार-प्रसार करना। प्रस्तुत शोध पत्र में कुछ ऐसे ही मानवीय मूल्यों पर चर्चा की गई है जो वर्तमान सभी राष्ट्रीय तथा वैश्विक समस्याओं के समाधान में सहायक हो सकते हैं।

मुख्य विषयवस्तु

भारतीय संस्कृति मानव समाज की अमूल्य निधि है। यह अनादिकाल से शाश्वत प्रवाहमान धारा के रूप में अनवरत प्रवर्तित रही है। भारतीय इतिहास ही नहीं

संपूर्ण विश्व का इतिहास इससे आबद्ध रहा है। इसके विशिष्ट महत्त्व और अवदान को देखकर विश्व मानव आज भारतीय संस्कृति के प्रति नतमस्तक है। यदि आज संसार की कोई संस्कृति अमर कही जा सकती है तो वह निःसंदेह एकमात्र भारतीय संस्कृति ही है। भारतीय संस्कृति के दिव्य आलोक का ही सुपरिणाम है कि भारत आज विश्व में अपना सर्वोत्कृष्ट स्थान बनाए हुए है। भारत की राष्ट्रीयता संस्कृति के आलोक से आलोकित हो रही है।

किसी भी राष्ट्र की महानता व गरिमामयी व्यक्तित्व का निर्माण उसकी श्रेष्ठ सांस्कृतिक व सामाजिक परंपराओं, ज्ञान-विज्ञान तथा कला के क्षेत्र में उत्कृष्ठ उपलब्धियों, इतिहास के गौरवशाली स्वरूप एवं उदात्त जीवन-मूल्यों पर निर्भर करता है।

जीवन-मूल्य मूलतः संस्कृति की साधना का प्रतिफल है जो राष्ट्र के जीवन्त प्रतिमानों तथा मानवीय मूल्यों का आधार है। भारत राष्ट्र के जीवन-मूल्य गंगा के समान पावन एवं सर्वसमावेशी है। भारतीय संस्कृति के संवाहक वैदिक मंत्रद्रष्टा ऋषि, महर्षि, मुनि, योगी, तपस्वी तथा विभिन्न महापुरुषों ने मानवीय मूल्यों को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने के अपने आदर्श प्रस्तुत किए हैं। भारतीय संस्कृति ने जिन जीवन-मूल्यों को शाश्वत रूप में प्रतिष्ठापित किया है वे आज भी सत्य की कसौटी पर खरे हैं।

भारतीय संस्कृति रूपी समुद्र की अथाह गहराई में छिपे ये जीवन-मूल्य संस्कृत साहित्य में आज भी रत्नों की भाँति सुरक्षित है। भारतीय संस्कृति अनेक जीवन-मूल्यों, यथा–सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय, सहिष्णुता व उदारता, राष्ट्रीयता, दान व परोपकार, गृहस्थ भावना, माता-पिता व गुरु सम्मान, पर्यावरण-संरक्षण, सच्चरित्रता, कर्तव्य-परायणता, कर्मप्रधानता, प्रेम व सौहार्द्र आदि की अथाह प्रवाहमान सरिता रही है।

आज जबकि विश्व के समक्ष अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक व पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं, समाज में अत्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार, माता-पिता तथा गुरु की अवहेलना, नारी-अपमान, स्वार्थपरकता, हत्या, आत्महत्या, सामूहिक बलात्कार, पर्यावरण विनाश, बढ़ता प्रदूषण, राष्ट्रद्रोह की बढ़ती प्रवृत्ति, बेरोजगारी, कर्तव्यविमुखता, हिंसा, परिग्रह, चोरी आदि की भयावह स्थिति मूल्यहीनता का ही दुष्परिणाम है।

आज ना श्वास लेने को शुद्ध हवा है, न पीने को शुद्ध पानी, ना खाने को शुद्ध फल-सब्जी है, ना परस्पर प्रेम-भाव, भाई, भाई का दुश्मन बन गया है, बच्चों को माता-पिता बोझ लगने लग गए हैं, गुरु-शिष्य संबंध विकृत होने लगे हैं, दिन-प्रतिदिन औरतों की लज्जा भंग हो रही है, अश्लीलता चरम पर है, शिक्षा के मन्दिर

राष्ट्र-विरोधी गतिविधियों के केंद्र बनते जा रहे हैं, भौतिकता की अंधी दौड़ में परिवार, रिश्ते सब पीछे छूटते जा रहे हैं। हमें इस दिशा में न केवल गंभीर चिंतन करना होगा बल्कि चिंतन को आचरण में लाना होगा। इस हेतु आवश्यक है–भारतीय संस्कृति में निहित मानवीय मूल्यों को स्वयं के आचरण में लाना तथा उनका भरपूर प्रचार-प्रसार करना। प्रस्तुत शोध पत्र में कुछ ऐसे ही मानवीय मूल्यों पर चर्चा की गई है जो वर्तमान सभी राष्ट्रीय तथा वैश्विक समस्याओं के समाधान में सहायक हो सकते हैं।

1. विश्वबंधुत्व- भारतीय ऋषियों ने 'उदारचरितानान्तु वसुधैवकुटुंबकम' कहकर संपूर्ण पृथ्वी वासियों के बीच विश्वबंधुत्व की भावना का उद्घोष किया है। भारतीय संस्कृति मानव-मानव के बीच पारस्परिक विभेदों को समाप्त करने का संदेश देती है। यहाँ संपूर्ण पृथ्वी को मानव का घर माना गया है। वेद का वचन है–

"जनं विततो बहुधा विवाससं नाना धर्माणं पृथ्वी यथौकसम" (अथर्ववेद, 12/1/45)

यदि सभी राष्ट्र विश्व-बंधुत्व की भावना को अंगीकृत करलें तो कभी सीमाओं पर तनाव ही नहीं पैदा होगा और न ही युद्ध के हालात पैदा होंगे, जिसकी आज महती आवश्यकता है।

2. राष्ट्रीयता- राष्ट्रीयता की भावना भारतीय संस्कृति में निहित प्रमुख जीवन-मूल्य है। राष्ट्रवाद की अवधारणा वैदिक काल से प्रादुर्भूत होकर क्रमशः विकसित हुई। राष्ट्रीय भावना के कारण ही आध्यात्मिक एवं भौतिक दृष्टि से भारतीय मानव पर्याप्त देशानुरागी रहा है। जन्मभूमि का महत्त्व वाल्मीकि ने राम के शब्दों में व्यक्त किया है–

"अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।"

आज युवाओं में राष्ट्रीयता की भावना के विकास की सर्वाधिक आवश्यकता है। कुछ स्वार्थलोलुप राजनैतिज्ञ विश्वविद्यालयी छात्र-छात्राओं में राष्ट्रद्रोह की भावना भर रहे हैं तथा उन्हें राष्ट्र विरोधी गतिविधियों हेतु उकसाकर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। इससे न केवल राष्ट्र के विकास में बाधा आ रही है बल्कि राष्ट्र की गरिमा भी धूमिल हो रही है। इन युवाओं को इन स्वार्थलोलुप लोगों से बचने तथा भारतीय संस्कृति के अनुरूप राष्ट्र के प्रति कर्तव्य-पालन की आवश्यकता है।

3. परोपकार- परोपकार का अर्थ है–दूसरों की भलाई करना। यह ऐसा कृत्य है जिसके द्वारा शत्रु भी मित्र बन जाता है। इसमें निःस्वार्थता की भावना होती है। चाणक्य के अनुसार, जिन सज्जनों के हृदय में परोपकार की भावना जागृत होती है, उनकी आपत्तियाँ दूर हो जाती हैं और पग-पग पर उन्हें संपत्ति तथा यश की प्राप्ति

होती है। तुलसीदास जी लिखते हैं–

"परहित सरिस धरम नहिं भाई
परपीड़ा सम नहिं अधमाई।।"

महर्षि वेदव्यास का स्पष्ट उद्घोष है–

"परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम्।।"

आज व्यक्ति भौतिकता तथा आधुनिकता की अंधी दौड़ में केवल अपनी स्वार्थसिद्धि में लगा है, चाहे दूसरों का उससे कितना ही नुकसान क्यों न करना पड़े; यहाँ तक कि रिश्ते-नातों तक की परवाह नहीं करता। इस भावना से स्वस्थ समाज की रचना में बड़ी बाधा उत्पन्न हो रही है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को भारतीय सांस्कृतिक जीवन-मूल्य परोपकार को आचरण में लाने की महती आवश्यकता है।

4. सहिष्णुता- सहिष्णुता का अर्थ है–सहनशीलता। यह एक भावात्मक शक्ति है। महात्मा गाँधी कहते थे–आज की जरूरत एक धर्म नहीं है बल्कि विभिन्न धर्मों को मानने वालों के बीच समानता व सहिष्णुता है। सहनशीलता ऐसा मूल्य है जिससे जीवन का वास्तविक विकास होता है। सहिष्णुता भारतीय संस्कृति का मूलाधार रहा है। यहाँ अनेक जातियों, अनेक धर्मों, अनेक संप्रदायों, अनेक भाषाओं, बोलियों एवं अनेक वर्गों व वर्णों के बीच अभूतपूर्व समन्वय, सहिष्णुता का प्रारंभ से ही सर्वोच्च उदाहरण रहा है। रहीमदास जी ने लिखा है–

छिमा बडे न को चाहिए, छोटन को उतपात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगुमारी लात।।"

इससे बड़ा आदर्श सहनशीलता का क्या हो सकता है? और हमें इस बात का गर्व है कि आज भी भारत दुनिया का सर्वाधिक सहिष्णु राष्ट्र है किंतु कुछ स्वार्थलोलुप प्रकृति के लोग युवाओं में असहिष्णुता की भावना भरने में लगे हैं जिससे कई बार सांप्रदायिक सौहार्द्र को नुकसान पहुँचा है, साथ ही राष्ट्र की गरिमा पर उँगली उठती है। हमें अपने राष्ट्र के गौरवशाली इतिहास तथा संस्कृति पर गर्व करते हुए सहिष्णुता को अपने जीवन का हिस्सा हमेशा बनाए रखना है। इससे न केवल राष्ट्र का अपितु संपूर्ण मानव जाति का हित होगा।

5. माता-पिता तथा गुरु-भक्ति- यह सर्वसत्य है कि एक जन्म हमें माता-पिता से मिलता है, दूसरा जन्म हमें गुरु के द्वारा दिया जाता है, हमें शिक्षित-दीक्षित करके। हम कभी भी इन दोनों के ऋण से उऋण नहीं हो सकते। माता-पिता कितने ही कष्ट-पीड़ा सहकर अपने बच्चों के हर सपने को साकार करने का प्रयत्न करते हैं। वहीं गुरु अपने ज्ञान-रूपी प्रकाश से हमारे जीवन के हर अंधकार को दूर करने में बड़ी भूमिका निभाते हैं। इतिहास गवाह है कि किसी भी सफलतम व महान व्यक्ति के पीछे उसके माता-पिता तथा गुरु का अथक परिश्रम रहा है। वीर

शिवाजी, अर्जुन, कर्ण, विवेकानंद, स्वयं भगवान राम व कृष्ण आदि विश्व में उदाहरण हैं। किंतु वर्तमान में माता-पिता तथा गुरु होने के प्रति ही सम्मान में कमी आई है। वृद्धाश्रमों की बढ़ती संख्या तथा छात्र द्वारा शिक्षक की हत्या जैसी घटनाएँ इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। शिक्षक-शिष्य का पवित्र रिश्ता अब सिर्फ स्वार्थसिद्धि तक सीमित होता जा रहा है। बच्चे बड़े होकर वृद्ध माता-पिता को छोड़कर चले जाते हैं, जिससे वे शारीरिक तथा मानसिक प्रताड़ना का शिकार हो रहे हैं।

हमारी भारतीय संस्कृति ऐसी नहीं है। हमने प्राचीन समय से ही माता-पिता तथा गुरु को देवतुल्य माना है, उनकी आज्ञा हमेशा शिरोधार्य की है। तुलसीदासजी भगवान राम का उदाहरण देते हुए लिखते हैं–

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। माता पिता गुरु नावहिं माथा।।

इसी प्रकार गुरु को भगवान के बराबर दर्जा दिया गया है। कहा गया है–

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

किसी भी राष्ट्र के निर्माण में सर्वप्रमुख भूमिका माता-पिता तथा गुरु की ही होती है। यदि भारत को पुनः विश्व गुरु के शिखर पर पहुँचना है तो हमें माता-पिता तथा गुरु को उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित करना ही होगा।

6. अहिंसा- अहिंसा अर्थात् हिंसा न करना। मन, वाणी तथा कृत्य से किसी भी जीव को दुःख न पहुँचाना ही अहिंसा है। भारतीय संस्कृति का मूल है–अहिंसा। अहिंसा ही वह मार्ग है जिस पर चलकर स्वस्थ समाज का निर्माण होता है। भगवान महावीर, भगवान बुद्ध तथा महात्मा गाँधी भारत में अहिंसा के प्रमुख सूत्रधार रहे हैं। पतंजलि योग दर्शन के पाद 2 सूत्र 35 में कहा गया है–

"अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैर त्यागः।"

अर्थात् अहिंसा की साधना से वैर-भाव निकल जाता है। महाभारत के अनुशासन पर्व में कहा गया है–अहिंसा परमोधर्मः। किंतु आज इस अहिंसा के जनक भारत में चहुँ ओर हिंसा व्याप्त दिखाई देती है।

आज हिंसक वृत्ति के कारण ही परिवार टूट रहे हैं, रिश्तों की मर्यादाएँ समाप्त हो रही हैं, आपसी द्वेष व वैमनस्य बढ़ रहा है, कहीं जाति के नाम पर, कहीं भाषा के नाम पर तो कहीं संप्रदाय के नाम पर हिंसक घटनाएँ हो रही हैं, पूरी दुनिया आज एक बारूद के ढेर पर खड़ी है, एक चिनगारी उसे समूल नष्ट कर सकती है। अतः आज मनुष्य, मनुष्यता व दुनिया को बचाने के लिए अहिंसा से बढ़कर कोई उपाय-आश्रय नहीं हो सकता। प्रकृति, पृथ्वी तथा पर्यावरण एवं प्राणीमात्र की रक्षा करने वाली अहिंसा ही है। अतः हमें अहिंसा के जीवन-मूल्य को अपने आचरण में धारण करना ही होगा।

7. पर्यावरण संरक्षण : भारतीय संस्कृति में हमेशा से ही पर्यावरण संरक्षण

का भाव रहा है। हमारे वैदिक मंत्रों में कहा गया है–

ॐ पूर्णमदः पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

अर्थात् मानव अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करे कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुँचे। हमारे ऋषि-मुनियों ने सदैव प्रकृति की आराधना, अर्चना व प्रार्थना कर पारिस्थितिक संतुलन को कायम रखा। उन्होंने पर्यावरण के शुद्धिकरण के लिए शांति स्रोतों का स्तवन किया- "ओ३म् द्यौ शांति, अंतरिक्ष शान्ति पृथिवी शांतिरापः शांति ओषधयः शांति वनस्पतयः शांति ब्रह्म शांति सर्वशांति शांतिरेव शांति शामा शांतिरेधि।।" बढ़ते भौतिकवाद तथा बाजारवाद के युग में मानव ने अपनी तुच्छ स्वार्थों की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों का निर्ममतापूर्वक दोहन किया है, यही वजह है कि आज न तो पीने को शुद्ध पानी, न साँस लेने को शुद्ध हवा, न खाने को शुद्ध फल-सब्जियाँ, परिणामतः गंभीर बीमारियाँ पैदा हो रही हैं। साथ ही अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मौसम परिवर्तन, ओजोन क्षरण तथा ग्लोबल वार्मिंग जैसी भयावह स्थितियाँ पैदा हो गई हैं, जिनसे पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व ही संकट में आ गया है। अतः यदि हम अब भी जागृत नहीं हुए तो बहुत देर हो जाएगी। दुनिया को यदि इस संकट से बचना है तो प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को जानना, समझना तथा अंगीकार करना सर्वोत्कृष्ट समाधान हो सकता है।

निष्कर्ष

जब हम भारतीय संस्कृति के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि यह जीवन-मूल्यों का अथाह सागर है जिसकी कुछ बूँदों का भी व्यक्ति आचमन कर ले तो उसका जीवन सफल हो सकता है। जिस प्रकार आज राष्ट्रीय तथा वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अनेक गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो रही है, यह सब जीवन-मूल्यों के क्षरण का ही दुष्परिणाम है। आज प्रत्येक व्यक्ति भौतिकता व आधुनिकता की अंधी दौड़ में इतना अंधा व स्वार्थी हो गया है कि वह अपने विनाश की ओर अग्रसर हो रहा है। मानवीय संवेदनाएँ समाप्त हो रही हैं, परिवार टूट रहे हैं, रिश्तों की मर्यादाएँ धूमिल हो रही है, अश्लीलता, चरित्रहीनता बढ़ रही है, चोरी, डकैती, हत्या, आत्महत्या, बलात्कार, प्रकृति का अत्यधिक दोहन, सांप्रदायिक दंगे, आतंकवाद आदि की भयावह स्थिति बन गई है। शिक्षा के मंदिर जिनका कार्य राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करना होता है, कलुषित राजनीति के केंद्र बनते जा रहे हैं, जहाँ विद्यार्थियों को राष्ट्रविरोधी गतिविधियों में शामिल होने हेतु प्रेरित किया जाने लगा है। इन सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान है–भारतीय संस्कृति में निहित जीवन-मूल्य। इन मूल्यों में सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय, विश्व-बंधुत्व, सर्वधर्म

समभाव, सहिष्णुता, परोपकार, माता-पिता व गुरु-भक्ति तथा पर्यावरण संरक्षण आदि प्रमुख हैं। संपूर्ण विश्व को इन मूल्यों को अंगीकृत करने की आवश्यकता है ताकि हम आने वाली नस्लों को स्वस्थ समाज, स्वस्थ राष्ट्र तथा स्वस्थ दुनिया दे सकें।

संदर्भ

1. गोस्वामी, के.डी. (2015), समाज एवं पर्यावरण : चुनौतियाँ एवं समाधान, नई दिल्ली, रावत प्रकाशन।
2. सोजित्रा, विजय एस. (2011), वैदिक संस्कृति एवं पर्यावरण संरक्षण, जयपुर, पैराडाइज पब्लिशर्स।
3. पाण्डे, रमाकान्त (2013), पर्यावरण प्रबंधन, नई दिल्ली, अनुभव पब्लिकेशन।
4. मेहता, ओम प्रकाश (2015), भारतीय पर्यावरणीय आचारशास्त्र, दिल्ली, न्यू भारतीय बुक कॉर्पोरेशन।
5. व्यास, हरिश्चन्द्र (2006), पर्यावरण : कल, आज और कल, जयपुर, श्याम प्रकाशन।
6. त्रिवेदी, पी.सी., गुप्ता, गरिमा (2010), पर्यावरण अध्ययन, जयपुर, आविष्कार पब्लिशर्स।
7. यजुर्वेद संहिता, सावलेकर स्वाध्याय मण्डली, पारडी भाटिया, अरविन्द : कोहली, कुलवंत सिंह (2015-16), पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण जैविकी, नई दिल्ली, आर.बी.डी. पब्लिशिंग हाउस।
8. http://hindi.indiawaterportal.org/environment-protection
9. www.essayinhindi.com/environment